भक्ति और शक्ति के समन्वयी

समर्थ गुरु रामदास

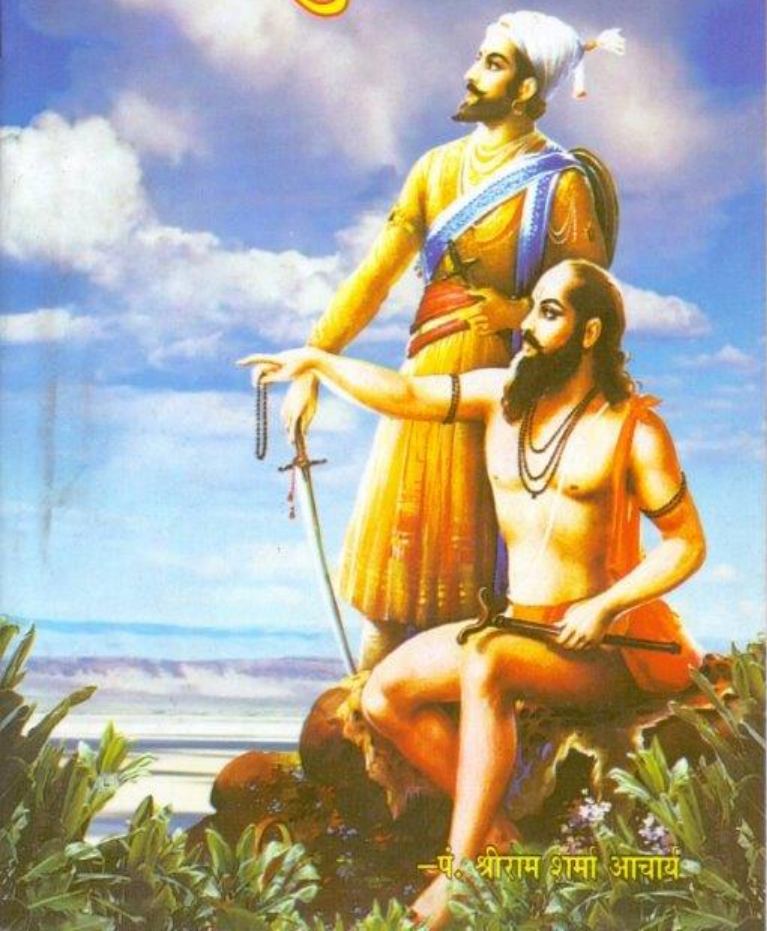

-पं. श्रीराम शर्मा आचार्य

भक्ति और शक्ति के समन्वयी—

समर्थ गुरु रामदास

हमारे देश में 'संत' का आशय धार्मिक और आध्यात्मिक जीवन पर विचार और प्रचार करने वाले परमार्थी व्यक्तियों से समझा जाता है। इन संतों का रचा साहित्य भारत के प्रत्येक प्रदेश में बहुत बड़े परिमाण में पाया जाता है। उसका प्रचार विशेष रूप से उन संतों के अनुयायियों में ही पाया जाता है, जिन्होंने काल-प्रभाव से अब छोटे-बड़े संप्रदायों का रूप धारण कर लिया है। इन संतों ने अपनी 'वाणियों, में प्रायः वेदांत और अन्य दार्शनिक तत्त्वों को सर्व-साधारण द्वारा समझी जा सकने लायक भाषा-शैली में वर्णन किया है। इसमें संदेह नहीं कि उनका दृष्टिकोण मुख्यतः अपने शिष्यों और अनुयायियों को धर्माचार का एक विशिष्ट दृष्टिकोण देना ही था।

पर बहुत समय से भारतीय जनता धर्म के मूलस्वरूप को भूलकर उसे सामान्य-जीवन से कोई भिन्न बात मानने लग गई थी, जिससे लोग पूजा-पाठ, जप-तप करते हुए भी सामाजिक और राष्ट्रीय व्यवहार में विपरीत आचरण करने लग गए थे। उदाहरण के लिए जिन लोगों ने अपने किसी स्वार्थ के कारण विदेशी आक्रमणकारियों को बुलाकर अथवा उनके साथ सहयोग करके देश को पराधीन कराया, जनता पर अत्याचार कराए, संपत्ति को लुटवाया, उनको किसी ने अधार्मिक नहीं कहा। कारण यह कि इन समाज-विरोधी कार्यों को करते हुए भी वे अच्छी तरह से पूजा-पाठ, तीर्थ-यात्रा, दान-दक्षिणा आदि का जिनको लोग 'धर्म-कृत्य' के नाम से पुकारते हैं, पालन करते रहते थे।

समर्थ गुरु रामदास ने (सन् १६०८ से १६८२) धार्मिक भावना की इस त्रुटि को अनुभव किया और प्रवचनों तथा वाणियों में यह प्रतिपादित किया कि केवल धर्म और अध्यात्म की चर्चा करने का

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

कोई महत्त्व नहीं। मनुस्मृति के अनुसार **'विद्वद्भिः सेवितः सद्भिः'** अर्थात् "जो कृत्य ज्ञानियों द्वारा सेवित या आचरित होते हैं, वे ही धर्म होते हैं।" केवल चर्चा करने से कोई बात धर्म नहीं हो जाती, इसलिए उन्होंने जनता में धर्म के जिन सिद्धांतों का प्रचार किया तथा तदनुसार आचरण और लोक व्यवहार करने पर भी जोर दिया।

विदेशी शासन से हिंदू धर्म में विकृति—

उनके समय में विधर्मियों की प्रधानता के कारण हिंदू-धर्म एक संकट काल से होकर गुजर रहा था और विदेशी शासकों के राजनीतिक तथा सामाजिक दबाव के कारण उसमें तरह-तरह के दूषित सिद्धांतों और क्रियाओं का समावेश हो रहा था। सामान्य हिंदू जनता पहले ही बहुदेववादी थी। वह राम, कृष्ण, शिव, दुर्गा, गणेश, सूर्य आदि के साथ और भी बीसियों क्षुद्र स्थानीय देवों की पूजा करती थी। अब मुसलमानों के संपर्क में आकर वह उनके फकीर और औलियाओं को भी 'चमत्कारी' मानकर पूजने लगी थी। ऐसे लोग मुसलमानों के ताजियों को भी एक प्रकार की मूर्ति समझकर उनकी मानता करते थे और उस अवसर पर बाँटे जाने वाले मलीदा को प्रसाद समझकर खा लेते थे। बहुत से उस अवसर पर हरे कपड़े पहनकर थोड़ी देर के लिए फकीर बन जाते थे और अपने छोटे बच्चों को ताजियों के नीचे होकर निकालते थे। इस प्रकार के व्यवहार के कारण बहुसंख्यक हिंदुओं की श्रद्धा अपने धर्म पर से शिथिल होती जाती थी और समाज में तरह-तरह की दूषित प्रथाओं का प्रवेश होता जाता था।

इतना ही नहीं, अनेक हिंदू पंडित और ब्राह्मण मुसलमानों के प्रभाव अथवा व्यक्तिगत लाभ की दृष्टि से मुसलमानों की कितनी बातों का समर्थन भी करने लगे थे। दक्षिण में दो ब्राह्मण किसी मुसलमान शासक के उकसाने पर वैदिक कर्मकांड करने वालों पर आक्षेप करने लगे। उन्होंने कहा—"मुसलमान पशु-वध करते हैं, इसके लिए यदि वे दोषी हैं तो ब्राह्मण भी यज्ञ में पशु हिंसा करते हैं, वे दोषी क्यों नहीं ?" कितने ही पंडितों ने प्राचीन शास्त्रों और

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

स्मृतियों में ऐसे श्लोक बनाकर सम्मिलित कर दिए, जिनसे हिंदू-धर्म की हीनता प्रकट होती थी और वह निर्बल बनता था।

समर्थ गुरु रामदास ने हिंदू-धर्म की इस विकृति को देखा तो, इससे उनके हृदय को चोट लगी। अपने आस-पास के लोगों के ऐसे कार्यों और बातों को देखकर वे छोटी अवस्था से ही हानिकारक धार्मिक रूढ़ियों के संशोधन और समयोपयोगी सशक्त विचारधारा के प्रचार की कल्पना किया करते थे। उनके अनुयायियों का कथन है कि, बहुत छोटी अवस्था में ही उन्होंने कितने ही दिन तक हनुमान् जी के एक मंदिर में बैठकर इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए जप किया था और उनकी निष्ठा से प्रसन्न होकर हनुमान् जी ने प्रकट होकर मंत्रोपदेश देकर कहा—सारी पृथ्वी में यवन छाए हुए हैं, अनीति का राज्य है, दुष्ट लोग अधिकार-सत्ता से मतवाले होकर साधुजनों को सता रहे हैं। इसलिए तुम वैराग्य वृत्ति से कृष्णा नदी के तट पर उपासना करके ज्ञान प्राप्त करो और लोकोद्धार के कार्य में संलग्न हो जाओ।" उसी समय से समर्थ गुरु ने अपने जीवन का एकमात्र उद्देश्य धर्म का संशोधन और उसकी रक्षा करना ही बना लिया।

विवाह से विरक्ति और गृह-योग—

एक तरफ बालक रामदास (जिसका नाम उस समय नारायण था) के हृदय में स्वधर्म और स्वजाति की सेवा का यह अंकुर उत्पन्न हो रहा था और दूसरी तरफ उनकी माता राणूबाई उनके विवाह का विचार कर रही थी। उस समय मुसलमानों के अत्याचारों से बचने के लिए बाल-विवाह की रीति विशेष रूप से प्रचलित हो गई थी। यद्यपि पति और पत्नी का समागम प्रायः बड़ी आयु में होता था। पर मुसलमानों की वक्रदृष्टि कुमारी कन्याओं पर रहने के कारण सामान्य श्रेणी के व्यक्ति विवाह-विधि छोटी आयु में ही संपन्न कर देते थे। पर रामदास विवाह की चर्चा चलने पर नाराज होते और विरक्ति का भाव प्रकट करते। एक बार इस संबंध में ज्यादा कहने-सुनने पर वे जंगल में भाग गए। तब उनके बड़े भाई गंगाधर जी उसको बहुत समझा-बुझाकर घर वापस लाए। बड़े भाई

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

को निश्चय हो गया था कि रामदास कभी विवाह न करेंगे, पर उसकी माता को संतोष नहीं होता था। वे जब कभी अवसर पातीं, उन्हें विवाह के लिए समझाती ही रहती थीं।

एक बार इसी तरह आग्रह करते-करते उन्होंने रामदास से विवाह के लिए जबर्दस्ती 'हाँ' कहलवा लिया। इस पर माता ने एक ब्राह्मण-कन्या से उनका संबंध पक्का कर दिया। नियत तिथि पर घर वाले बरात के साथ कन्या के घर पहुँचे और विवाह की क्रिया होने लगी। जब अंतरपट पकड़ने के पश्चात् भाँवरों का समय आया, तो सब ब्राह्मणों ने एक साथ 'सावधान' शब्द का उच्चारण किया। रामदास के मन में विचार आया कि यह लोग इतने जोर से 'सावधान' क्यों कह रहे हैं ? क्या इसका यह आशय है कि, अब मैं एक ऐसे बंधन में पड़ने जा रहा हूँ, जिससे आजन्म छुटकारा नहीं मिलेगा ? ऐसा विचार आने से उनकी मनोवृत्ति एकदम बदल गई और वे विवाह-मंडप से उठकर बड़े जोर से बाहर की तरफ भागे। कुछ लोग उनको पकड़ने के लिए दौड़े, पर उस 'हनुमान-भक्त' को कौन पा सकता था ? इस समाचार को पाकर उनकी माता जब दुःखी होने लगी तो बड़े भाई ने समझाया कि—"रामदास जहाँ रहेगा आनंद से ही रहेगा, तुम उसकी ज्यादा चिंता न करो। उसने धर्म-साधन का दृढ़ निश्चय कर लिया है, इसलिए विवाह के लिए उसके पीछे पड़ना ठीक न होगा।"

पंचवटी में साधना—

इस घटना के पश्चात् रामदास ने जीवन-साधना में लग जाना आवश्यक समझा और वे अपने गाँव से कई सौ मील की यात्रा करके प्रसिद्ध तीर्थ पंचवटी (नासिक) पहुँच गए। यह गोदावरी के तट पर भगवान् राम का प्रसिद्ध तीर्थ है। वहाँ पर वे 'टाकली' नामक स्थान में रहकर जप-तप और भजन करने लगे। वे प्रातःकाल से दोपहर तक गोदावरी के जल में खड़े होकर गायत्री का जप करते रहते थे। दोपहर के बाद भिक्षा लेकर भोजन करते तथा भजन और जप में लग जाते। इस प्रकार बारह वर्ष तक तपस्या करके उन्होंने गायत्री के कितने ही पुरश्चरण कर डाले।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

इस तपस्या के फल से उनकी आत्मिक शक्ति कितनी अधिक बढ़ गई थी, इसके संबंध में एक घटना प्रसिद्ध है ? इनकी तपोभूमि 'टाकली' के पास ही 'दशकपेचक' ग्राम में एक पटवारी रहता था। उसे क्षय रोग हो गया और हालत खराब होते-होते एक दिन वह संज्ञाशून्य हो गया। लोगों ने उसे मरा हुआ समझकर उसके अंतिम-संस्कार की व्यवस्था की और उसकी अर्थी बनाकर गोदावरी के किनारे ले चले। उसकी युवती भार्या भी सती होने की मनोकामना से उसके पीछे-पीछे जा रही थी। मार्ग में ही समर्थ गुरु रामदास की गुफा पड़ी और उस स्त्री ने महात्मा जानकर समीप जाकर प्रणाम किया। उन्होंने परिस्थिति को न जानते हुए साधारण भाव से आशीर्वाद दे दिया—'सौभाग्यवती-पुत्रवती होओ।' यह सुनकर स्त्री ने अपने पति का देहांत होने की बात कही।' पर रामदास ने स्त्री के लक्षण देखकर समझ लिया कि यह विधवा नहीं हो सकती। इसलिए उन्होंने कहा कि तुम्हारा पति मर नहीं सकता, उसकी फिर से अच्छी तरह परीक्षण करो। इस पर लोगों ने ध्यान देकर देखा, तो उसमें जीवन के लक्षण जान पड़े। कुछ उपचार करने से वह होश में आ गया और फिर क्रमशः स्वस्थ भी हो गया। कुछ वर्ष पश्चात् उसके जो प्रथम पुत्र हुआ उसको उन्होंने समर्थ गुरु का शिष्य बना दिया। आगे चलकर उद्धव गोस्वामी के नाम से वह उनका प्रधान शिष्य हुआ।

देश भ्रमण और सामाजिक स्थिति का निरीक्षण—

जब बारह वर्ष तक 'टाकली' में तपस्या करके समर्थ गुरु रामदास ने शरीर और मन पर पूरा नियंत्रण प्राप्त कर लिया तब वे लोक-कल्याण अथवा धर्म-स्थापना के लिए स्वदेश की स्थिति का निरीक्षण करने बाहर निकले। प्राचीन समय में जब रेल, तार, जहाज, अखबार, प्रेस आदि का सर्वथा अभाव था, जनता का नेतृत्व करने वाले महापुरुषों को समस्त देश में घूमकर समाज और धर्म की अवस्था का निरीक्षण करना अनिवार्य होता था। यद्यपि इसके लिए लंबे और कठिन मार्गों पर पैदल चलना, जैसा भोजन जब मिले उसी पर संतोष करना, दो-चार दिन न मिले तब भी

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

व्याकुल न होना, सर्दी, गर्मी, वर्षा, आँधी-तूफान आदि सब प्रकार की प्राकृतिक कठोरताओं को शरीर पर सहन करना, विभिन्न प्रांतों के निवासियों से व्यवहार करना और मिल-जुलकर काम निकालना आदि तरह-तरह की कठिनाइयाँ सहन करनी पड़ती थीं। पर इस तरह देश की सच्ची स्थिति का जैसा परिचय प्राप्त होता था और दूर-दूर के स्थानों से संपर्क स्थापित हो जाता था, वह आज के रेल और मोटर-युग में संभव नहीं। आजकल की यात्राओं का ध्येय मनोरंजन और थोड़ी-सी भौगोलिक जानकारी ही मानी जा सकती है, जबकि पुराने जमाने की यात्राओं से देश की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक—सभी समस्याओं का ज्ञान हो जाता था। समर्थ गुरु रामदास इस तथ्य को अच्छी तरह समझते थे, उन्होंने जब इस प्रकार भ्रमण का निश्चय किया और निर्वाह के लिए भिक्षावृत्ति को अपनाया तो उस लोक कल्याणार्थ स्वीकार की गई 'भिक्षा' के महत्त्व को बतलाते हुए एक बार कहा था—

"भिक्षा निर्भय स्थिति है। भिक्षा से महानता प्रकट होती है और ईश्वर की प्राप्ति होती है। इतना ही नहीं, उससे स्वतंत्रता भी मिल जाती है। यदि स्वदेश-दशा का ज्ञान प्राप्त करना हो तो इसके लिए निःसंदेह 'भिक्षावृत्ति' से बढ़कर कोई अन्य साधन नहीं है। ग्राम हो चाहे नगर—घर-घर छान डालना चाहिए और 'भिक्षा' के 'मिस' से छोटे-बड़े सब प्रकार के लोगों की परीक्षा कर डालनी चाहिए। ऐसा करने से लोगों के सुख-दुःख मालूम होते हैं। उनके ज्ञान का लाभ भी अपने को मिल सकता है और अपने विचारों को उन पर प्रकट करने का अवसर मिलता है।" समर्थ गुरु रामदास ने 'भिक्षा' की सराहना तो की है, पर उन्हीं लोगों के लिए—जो जन-सेवा का व्रत धारण करके केवल जीवन-रक्षा के लायक कम से कम सामग्री से अपना काम चलाते हों। उन्होंने यहाँ तक कहा है कि, 'यदि कोई भिक्षा के लिए बहुत-सा अन्न लाएँ तो उसमें से एक मुट्ठी लेकर बाकी लौटा देना चाहिए। अर्थात् समाज की दानरूपी थाती का दुरुपयोग नहीं करना चाहिए, वरन् उसमें से अपने लिए कम से कम लेकर अपना जीवन समाज-सेवा के लिए अर्पण कर देना चाहिए। इस प्रकार सेवा-धर्म पालन करने वाले का 'भिक्षा' ग्रहण

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

करना सार्थक कहा जा सकता है। इससे विपरीत भिक्षा को मुफ्त का माल समझकर पेट भरने का साधन बना लेना तो महा निंदनीय कर्म और हरामखोरी ही है।

पुराने समय में जितने भी संत और धर्म संस्थापक हुए थे, उन सबने ऐसी ही यात्राएँ की थीं। आद्य शंकराचार्य यद्यपि बहुत छोटी—३२ वर्ष की आयु तक ही जीवित रहे, पर उन्होंने अपना संपूर्ण जीवनयात्रा करने में ही लगाया और भारतवर्ष के एक-एक कोने को छान डाला। इसी का परिणाम था कि उनको अपनी धर्म-संस्था को ऐसा दृढ़ और देशव्यापी संगठन बनाने में सफलता मिली, जो बारह-सौ वर्ष से अच्छी तरह कायम है और अभी तक देश में अपना पर्याप्त प्रभाव बनाए हुए हैं। रामभक्ति के महान् प्रचारक गोस्वामी तुलसीदास जी ने दूर-दूर तक की यात्राएँ करके ही वह अनुभव प्राप्त किया था, जिसके आधार पर 'रामचरित मानस' जैसा अमर ग्रंथ लिखा जा सका। गुरुनानक देव की यात्राएँ तो सबसे बढ़-चढ़कर थीं। उन्होंने भारतवर्ष के प्रत्येक भाग की ही पूरी तरह से यात्रा नहीं की, वरन् ईरान और मक्का तक पहुँचे। महाप्रभु चैतन्य ने भी समाजोद्धार का कार्य करने से पूर्व दक्षिण और पश्चिम के सब तीर्थों की यात्रा कर ली थी। वर्तमान समय में स्वामी विवेकानंद ने देश और विदेशों में भारतीय संस्कृति का झंडा गाड़ने के पूर्व समस्त भारत का भ्रमण करके देश और समाज की दशा का गंभीरतापूर्वक निरीक्षण किया था।

विभिन्न तीर्थों की यात्रा—

समर्थ गुरु रामदास के जीवन चरित्र में उनके देश-भ्रमण का जो वृत्तांत दिया गया है, उससे मालूम होता है कि उन्होंने सबसे पहले हिंदू-धर्म के केंद्र स्वरूप काशी की यात्रा की। वहाँ जब वे विश्वनाथ जी के मंदिर में पहुँचे तो वहाँ के कुछ पुजारियों ने उनकी वेशभूषा देखकर उन्हें कोई ब्राह्मणों से भिन्न जाति का वैरागी समझा। इससे उन्होंने उनको शिवजी की प्रतिमा के समीप जाने से निषेध किया। इस पर वे—'अच्छा, रामचंद्र की इच्छा'—यह कहकर शिवजी तथा पुजारियों को साष्टांग दंडवत् करके लौट पड़े। कहते हैं कि उनके

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

बाहर निकलते ही पुजारियों को शिवजी की प्रतिमा दिखाई न पड़ने लगी। इससे वे घबड़ाए और दौड़कर समर्थ गुरु से क्षमा-प्रार्थना की। जब वे पुनः मंदिर में आए तो प्रतिमा पुनः दिखाई पड़ने लग गई। इस चमत्कार-जैसी घटना से काशी में उनका सम्मान होने लगा और उन्होंने एक घाट पर हनुमान जी की मूर्ति की स्थापना कराई। प्रयाग और गया भी गए और फिर अयोध्या पहुँचे, जो उनके मुख्य इष्टदेव श्री रामचंद्र का लीलास्थल था। वहाँ कुछ समय ठहरकर वैरागी-समुदाय की व्यवस्था पर ध्यान दिया। फिर मथुरा, वृंदावन आदि ब्रज के तीर्थों को देखते हुए द्वारिका जा पहुँचे। वहाँ उन्होंने एक राम-मंदिर स्थापित करके एक महंत रख दिया। इसी प्रकार प्रभास क्षेत्र में रामदासी मठ की स्थापना करके लोगों को परमार्थ पथ का उपदेश दिया।

पंजाब का भ्रमण करते हुए वे श्रीनगर (कश्मीर) पहुँचे। वहाँ नानक पंथी साधुओं ने उनका बड़ा आदर-सत्कार किया। उनके व्यावहारिक अध्यात्म के उपदेशों से वे बड़े प्रभावित हुए और उनसे मंत्र-दीक्षा देने की प्रार्थना की। समर्थ गुरु रामदास इस प्रकार अकारण चेलों की संख्या बढ़ाते जाना अनुचित मानते थे। इसलिए उन्होंने उन साधुओं से कहा कि—आपके गुरु नानकदेव ऐसे महान् पुरुष थे, जिन्होंने मुसलमानों से भी 'राम-राम' कहलाया था। उनका उपदेश ही किसी प्रकार कम नहीं है, आप उसी को अपने जीवन में सार्थक करो, तो बहुत बड़ा काम हो सकता है। वहाँ से चलकर वे हिमालय में केदारनाथ, बद्रीनाथ की यात्रा करके एक बहुत ऊँचे शिखर पर चढ़े, जहाँ हनुमान जी का 'श्वेत-मारुति' नामक स्थान बतलाया जाता है। हिमालय की यात्रा आज भी बड़ी कठिन है और अनेक स्थानों में यात्रा करते हुए प्राण संकट स्पष्ट जान पड़ता है। पर समर्थ गुरु रामदास अपनी सहनशक्ति के प्रभाव से, उस जमाने में जब यात्रा के वर्तमान साधनों में से एक भी न था, वहाँ के बड़े-बड़े विकट स्थानों में भ्रमण कर आए। वे अपने समस्त अनुयायियों को भी आरंभिक अवस्था में संयम-नियम, ब्रह्मचर्य तपस्या का जीवन बिताने का उपदेश देते थे, जिससे आगामी जीवन में सांसारिक कठिनाइयों का अच्छी तरह सामना किया जा सके।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

उत्तराखंड की यात्रा करके वे जगन्नाथ जी पहुँचे। पद्मनाभ नामक ब्राह्मण को सुयोग्य समझकर वहाँ भी श्रीराम मंदिर की स्थापना की और उसे व्यवस्थापक बना दिया। फिर पूर्वी समुद्र के किनारे चलते हुए रामेश्वर के दर्शन किए और वहा से लंका पहुँच गए। वहाँ उन्होंने राम-भक्त हनुमान, विभीषण आदि का स्मरण किया और इस सम्बन्ध में कुछ पद्य रचना की। लंका से वापस आकर भारतवर्ष के पश्चिमी किनारे होकर केरल, मैसूर, कर्नाटक आदि प्रदेशों को देखते हुए महाराष्ट्र में आ गए। यहाँ उन्होंने गोकर्ण, व्यंकटेश, मल्लिकार्जुन, बाल-नरसिंह, पालन-नरसिंह आदि प्रसिद्ध मूर्तियों का दर्शन किया। इसके बाद पंपासर, ऋष्यमूक, करवीर-क्षेत्र, पंढरपुर आदि होकर पंचवटी लौट आए।

समर्थ गुरु रामदास की आयु के १२ वर्ष बाल्यावस्था में व्यतीत हुए, जिसमें खेल-कूद कर अपने शरीर और सहज बुद्धि का पूरा विकास किया, फिर बारह वर्ष तपस्या करके मन पर पूर्ण नियंत्रण और आध्यात्मिक शक्ति प्राप्त की, उसके बाद १३ वर्ष तक भारत के समस्त भागों में भ्रमण करके देश का निरीक्षण किया, पतन और पराधीनता के कारणों की जाँच की, प्रत्येक स्थान में वे वहाँ के प्रमुख विचारशील सज्जनों से मिले और उनके साथ विचार- विनिमय किया। इस प्रकार देश के विभिन्न भागों की स्थिति का स्वयं निरीक्षण करने और दूसरों की सम्मति सुनने से उन्हें तत्कालीन परिस्थिति का बहुत अच्छा ज्ञान हो गया। उन्होंने उन कारणों की भी खोज की, जिनसे हिंदू-जाति की दिन पर दिन अवनति होती जाती है। यद्यपि वे उस समय सर्वव्यापी साधु के वेष में थे, पर जनता की मनोवृत्ति का विश्लेषण करके उन्होंने यह निर्णय किया कि इस समय हिन्दुओं को निवृत्ति मार्ग के बजाय प्रवृत्ति मार्ग का सच्चा स्वरूप बतलाना और उसके कर्तव्यों का ठीक ढंग से पालन करने की प्रेरणा देना अत्यावश्यक है। जो लोग जगत् को मिथ्या कहकर कहीं एकांत में जा बैठते हैं, वे देश तथा धर्म के उद्धार की दृष्टि से सर्वथा अयोग्य हैं। उस समय तो उन कर्मवीरों की आवश्यकता थी, जो विपरीत परिस्थितियों के साथ संघर्ष करने को स्वयं तैयार हों और दूसरों को भी वैसी प्रेरणा दे सकें।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

जनता का संगठन—

अपने इस कार्यक्रम की पूर्ति के लिए समर्थ गुरु ने सबसे पहले देश में विशेषतः महाराष्ट्र में धर्म-सेवकों का एक विशाल और सुदृढ़ संगठन बनाने की योजना को कार्यान्वित करना आरंभ किया। वे चारों तरफ घूमकर हनुमान जी के मंदिरों और उनके साथ शारीरिक व्यायाम करने के लिए अखाड़ों की स्थापना करने लगे। खास-खास स्थानों पर उन्होंने 'रामदासी मठ' की शाखाएँ भी स्थापित कीं, जिनका काम अपने आस-पास की कार्यवाहियों का संचालन करना था। कहा जाता है कि इस प्रकार उन्होंने सात-आठ सौ अखाड़ों और मंदिरों की स्थापना महाराष्ट्र में की थी। इससे उस समस्त प्रदेश में जाग्रति की लहर फैल गई और अपने देश तथा धर्म की रक्षा के लिए उद्यत होने लगे। ऐतिहासिकों का मत है कि समर्थ गुरु रामदास ने भारतीय समाज में केवल 'स्वराज्य' की भावना ही नहीं फैलाई वरन् योजनाबद्ध रूप से उस भावना को कार्यरूप में भी परिणत कराया। शिवाजी महाराज ने जब महाराष्ट्र को मुगल बादशाह और बीजापुर के शासक से स्वतंत्र कराने के लिए युद्ध की घोषणा की, उस समय समर्थ गुरु के देशव्यापी प्रचार के फलस्वरूप ही उनको सेना के लिए लाखों शूरवीर सिपाही और अन्य तरह की सहायता प्राप्त हुई थी।

यद्यपि समर्थ गुरु रामदास संसार त्यागकर साधु हो गए थे और उनका मुख्य उद्देश्य परमात्मा का सान्निध्य प्राप्त करना ही था, पर वे यह भी कहते थे कि मनुष्य चाहे जितना बड़ा ज्ञानी बन जाए, उसके लिए चाहे कर्म-अकर्म में किसी प्रकार का भेद न रहे, पर सांसारिक कर्तव्यों का त्याग नहीं करना चाहिए। इस संबंध में वे 'गीता' के इस सिद्धांत के मानने वाले थे—

सक्ताः कर्मण्यविद्वांसो यथा कुर्वन्ति भारत।
कुर्याद्विद्वांस्तथाऽसक्तश्चिकीर्षुर्लोकसंग्रहम्।।
न बुद्धिभेदं जनयेदज्ञानां कर्मसंगिनाम्।
जोषयेत्सर्वकर्माणि विद्वान्युक्तः समाचरन्।।

(३-२५, २६)

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

"हे अर्जुन ! कर्म में आसक्त हुए सांसारिकजन जैसे कर्म करते हैं, वैसे ही अनासक्त हुआ विद्वान् भी लोक-शिक्षण के उद्देश्य से कर्म करता रहे। उसको इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि आसक्त भाव से कर्म करने वाले 'अज्ञानियों, की बुद्धि में उसके उदाहरण को देखकर किसी प्रकार का भ्रम उत्पन्न न हो जाय। इसलिए उसे परमात्म-तत्त्व को जानते हुए भी समस्त कर्मों को ठीक तरह से करना चाहिए और दूसरों से भी कराना चाहिए।"

इस सिद्धांत के अनुसार समर्थ गुरु रामदास ने संसार से पूर्ण विरक्त होते हुए भी राष्ट्रहित के बड़े-बड़े कामों को सिद्ध कराया। यद्यपि वे एक कौपीन, खड़ाऊँ और माला के अतिरिक्त अपने लिए कोई सामग्री नहीं रखते थे, पर हिंदू-जाति की रक्षा के लिए उन्होंने महाराज शिवाजी के राज्य-संस्थापन कार्य में हर तरह से सहयोग दिया। श्री महादेव गोविंद रानाडे और श्री राजवाड़े जैसे महाराष्ट्र के इतिहास की खोज करने वाले विद्वानों का कथन है कि—"महाराष्ट्र राज्य के वास्तविक संस्थापक समर्थ गुरु रामदास ही थे, शिवाजी उनकी तुलना की दृष्टि में निमित्त मात्र हैं। यदि समर्थ गुरु ने अपने प्रचार कार्य द्वारा जनता में हिंदुत्व की गहरी भावना जाग्रत् न की होती और बाद में भी वे सदैव लोगों को प्रेरणा न देते तो महाराज शिवाजी के कार्यक्रम का सफल होना असंभव ही था।"

माता से भेंट—

समर्थ गुरु रामदास अपनी माता की अभिलाषा को भंग करके विवाह मंडप से भाग आए थे। इससे वह बड़ी दुःखी हुई और पुत्र वियोग में रोते-रोते अंधी हो गई। समर्थ गुरु को भी उसका ध्यान था, पर कर्तव्यपालन के विचार से वे अपने घर नहीं जाते थे। जब बारह वर्ष तपस्या और बारह वर्ष यात्रा करके अपने निवास स्थान में लौट आए तो एक बार पैठण की यात्रा को जाते हुए अपने गाँव 'आंब' में पहुँच गए और अपने घर के दरवाजे के सामने जाकर 'जय-जय रघुवीर समर्थ' की आवाज लगाई। घर के भीतर उनकी माता ने बहू को आज्ञा दी कि—"वैरागी को भिक्षा दे आओ, पर समर्थ गुरु ने आगे

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

बढ़कर कहा कि—"अन्य वैरागियों की तरह भिक्षा लेकर लौट जाने वाला आज का वैरागी नहीं है।" इस बार माता ने अपने पुत्र की आवाज पहिचान ली और कहने लगी—"क्या नारायण आया है ?" रामदास जी माता के चरणों में गिर गए और माता भी उनको उठाकर प्रेम से मस्तक और मुख पर हाथ फेरने लगीं। उन्होंने रामदास जी के जटाजूट और दाढ़ी को स्पर्श करके कहा—"अरे नारायण ! तू कितना बड़ा हो गया ? हाय ! मुझे तो आँखों से कुछ दिखाई ही नहीं देता कि अपने बेटे को अच्छी तरह देख सकूँ।" श्री समर्थ ने यह सुनकर माता के चरणों में प्रणाम किया और उनके सिर पर हाथ फेरा, जिससे उनको देखने की शक्ति प्राप्त हो गई। माता को बड़ा आश्चर्य हुआ और वह कहने लगी—"बेटा ! यह तो तूने किसी अच्छे भूत को सिद्ध कर लिया है।" समर्थ गुरु ने कहा—"माताजी ! मैंने वही भूत सिद्ध किया है, जो अयोध्या में आनंद मंगल करता था और जिसने गोकुल-वृंदावन में अनेक आश्चर्यजनक लीलाएँ की हैं। इसी 'भूत' ने रावण और कंस का वध किया था और देवताओं को बंधन से छुड़ाया था। मैंने समस्त 'भूतों के प्राण भूत' को वश में किया है।" इसके पश्चात् वे कई दिन तक यहाँ ठहरे और अपने बड़े भाई 'श्रेष्ठ' से आध्यात्मिक विषयों पर चर्चा करते रहे। जब फिर भ्रमण के लिए घर से चलने लगे तो माता को बड़ा शोक हुआ। इस पर समर्थ ने उनको भागवत में वर्णित वही आत्मज्ञान सुनाया, जो कपिल मुनि ने अपनी माता के सम्मुख कहा था। इससे माता ने उनके जीवन-कार्य के महत्त्व को समझ लिया और उन्हें शांति प्राप्त हो गई।

समाज की रक्षा प्रथम कर्तव्य है—

समर्थ गुरु का जीवनोद्देश्य विदेशी आक्रमणों और विधर्मी शासकों के दमन तथा अत्याचारों से जर्जर हिंदू-जाति में फिर से नवजीवन का संचार करना था। उस समय लगभग पाँच-छह सौ वर्ष की पराधीनता के कारण हिंदू जनता का आत्मविश्वास बहुत कुछ नष्ट हो गया था और वे पारस्परिक फूट तथा संगठन के अभाव से अपने को मुसलमानों से हीन अनुभव करने लगे थे। हिंदुओं में अप्रत्यक्ष रूप से मुसलमानों की संस्कृति-सभ्यता और

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

बहुत-से रीति-रिवाजों का प्रवेश होता जाता था और इससे हिंदू-धर्म में तरह-तरह की विकृतियाँ पैदा होने लग गई थीं।

समर्थ गुरु रामदास ने देश में बारह वर्ष तक भ्रमण करके और प्रत्येक वर्ग तथा स्तर के व्यक्ति से मिलकर इस परिस्थिति को पूर्णतः हृदयंगम कर लिया था। जब वे भ्रमण समाप्त करके अपने आश्रम में स्थिर होकर बैठे तो हिंदू-जाति के पुनरुद्धार की समस्या पर गंभीरतापूर्वक विचार करने लगे। अंत में वे इसी निष्कर्ष पर पहुँचे कि हिंदुओं में जो आत्महीनता और असंगठन का दोष उत्पन्न हो गया है, सबसे पहले उसी को हटाने का प्रयत्न किया जाए। इसके लिए सबसे पहले संगठन की आवश्यकता थी। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए साधु, कार्यकर्ताओं और मंदिर तथा मठों की स्थापना का कार्य तो उन्होंने अपने भ्रमण काल में ही आरंभ कर दिया था। फिर जब वे कर्म-क्षेत्र में प्रवृत्त हुए तो उन्होंने कुछ वर्षों में ऐसे संगठन केंद्रों का एक जाल-सा बिछा दिया। पर यह सब होने पर भी वे समझते थे कि सामान्य जनता के, गृहस्थों के जाग्रत् और कर्तव्यनिष्ठ बने बिना, इस कार्य में दृढ़ता और स्थायित्व नहीं आ सकता। इसके लिए उन्होंने अपने उपदेशों में गृहस्थों को संबोधित करते हुए कहा—

"अनेक वर्णों और आश्रमों का मूल गृहस्थाश्रम ही है, जिसमें तीनों लोकों के प्राणियों को विश्राम मिलता है। देव, ऋषि, मुनि, योगी, तापस, वीतराग, पितृ आदि, अतिथि, अभ्यागत सब इस गृहस्थाश्रम से ही उत्पन्न होते हैं। यद्यपि ये लोग अपना आश्रम छोड़कर निकल जाते हैं, पर फिर भी ये आश्रित के रूप में गृहस्थ के घरों में ही घूमा करते हैं। इसलिए गृहस्थ-आश्रम ही देव आश्रमों से बढ़कर है लेकिन इस आश्रम में रहकर अपने कर्तव्य का पालन तथा सब प्राणियों का उपकार करना चाहिए।"

यद्यपि समर्थ गुरु जप, भजन, साधन, पुरश्चरण आदि को भी आत्मिक उन्नति के लिए आवश्यक समझते थे और वे स्वयं भी हठपूर्वक गृहस्थ को त्यागकर वैरागी बन गए थे, पर उनके मतानुसार इस मार्ग का अनुसरण करने का अधिकार उन्हीं को है, जो अपना जीवन धर्म और समाज को सेवा के लिए उत्सर्ग करने

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

की दृढ़ भावना और क्षमता रखते हों। जो लोग सनक या मूर्खता के आवेश में आकर साधु या वैरागी बनते हैं, उनकी उन्होंने स्पष्ट शब्दों में भर्त्सना की है। अपने मुख्य ग्रंथ 'दासबोध' में एक स्थान पर वे कहते हैं—

'पागल लोग घर-गृहस्थी को त्यागकर केवल दुःख भोगते हुए मर जाते हैं और इहलोक तथा परलोक दोनों को नष्ट कर लेते हैं। ऐसे लोग आवेश में आकर घर से तो निकल जाते हैं, पर लड़ने-झगड़ने में ही उनके जीवन का अंत हो जाता है। वे दूसरे बहुत-से लोगों को भी कष्ट देते हैं और स्वयं भी कष्ट पाते हैं। वे घर से निकल तो जाते हैं, पर फिर भी अज्ञानी ही बने रहते हैं। उनके पीछे बहुत-से लोग लग भी जाते हैं—उनके चेले बन जाते हैं, पर गुरु और शिष्य समान रूप से अज्ञानी बने रहते हैं। इसी प्रकार जो किसी आशा से अथवा स्वार्थ की लालसा से घर छोड़कर चल देते हैं, वे स्वयं अनाचारी बन जाते हैं और दूसरे लोगों में भी अनाचार फैलाते हैं। जो लोग अन्न-धन के अभाव के कारण घर से निकल जाते हैं, वे जगह-जगह चोरी करके मार खाते हैं। जिसमें स्वयं विवेक न होगा, वह दूसरों को क्या ज्ञान दे सकेगा ? वह घर-घर भीख माँगता फिरेगा और उसे भीख भी न मिलेगी। पर जो समाज की दशा को समझता है, देश-काल और परिस्थिति को पहचानता है, उसे भू-मंडल में कहीं किसी भी बात की कमी नहीं हो सकती।'

इस प्रकार समर्थ गुरु ने गृहस्थ और साधु दोनों को उनके कर्तव्यों का उपदेश दिया। सच्चे गृहस्थों को तो वे समाज का मूल आधार मानते ही थे और देशोद्धार के कार्य में उनका सहयोग प्राप्त करना अनिवार्य था ही, पर उन्होंने साधु वर्ग को स्पष्ट रूप से यह बता दिया कि यदि वे धर्म और समाज को सेवा की भावना से—उसकी रक्षा और उन्नति के काम में अपना सर्वस्व अर्पण कर देने का व्रत ग्रहण करके गृहस्थ आश्रम का त्याग करते हैं तब तो उनका वह कार्य समुचित और प्रशंसनीय कहा जा सकता है, अन्यथा वे पागल, ढोंगी अथवा पेट के लिए 'भिखारी' ही माने जाएँगे।

आगे चलकर समर्थ गुरु ने इस विषय को और भी स्पष्ट कर दिया है कि यद्यपि धर्मरक्षा के निमित्त 'साधु' बनकर उदर

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

निर्वाह के लिए भिक्षा ग्रहण करना बुरा नहीं है, पर ऐसा तभी कहा जा सकता है, जब समाज से थोड़ा-सा ग्रहण करके उसकी अधिक से अधिक सेवा की जाए। सच पूछा जाए तो ऐसे समाजसेवी को आज भी उदर निर्वाह के लिए चिंता नहीं करनी पड़ती, वह चाहे गृहस्थ बना रहे और चाहे साधु आश्रम को ग्रहण कर ले। समाज अपने सच्चे सेवकों को पहिचानता है और उनके भरण-पोषण की व्यवस्था बिना माँगे-जाँचे ही किसी रूप में अवश्य करता है। समर्थ गुरु ने 'भिक्षा' की चर्चा करते हुए कहा है—

"भिक्षा माँगकर खाने वाला 'निराहारी' कहलाता है और प्रतिग्रह के दोष से बच जाता है। जो किसी संत या असंत के घर से रूखा अन्न भिक्षा में माँगकर भोजन करता है, वह मानो नित्य अमृत खाता है। उसे बहुत थोड़ी-सी भिक्षा मिल जाने पर ही संतोष करना चाहिए। यदि कोई बहुत-सा अन्न ले आवे तो उसमें से केवल एक मुट्ठी ही लेना चाहिए। भिक्षा के लिए कुछ खास घरों को नियत कर लेना अथवा आठ दिन के लिए इकट्ठा माँगकर रख लेना, कभी ठीक नहीं कहा जा सकता।"

विचारणीय है कि आजकल के भिखारी जो केवल पेट भरने के लिए भी भिक्षा नहीं माँगते, वरन् भिक्षा से प्राप्त अन्न को बेचकर बीड़ी, तंबाकू, गाँजा, भाँग मदिरा आदि का सेवन करते हैं, किस श्रेणी में आते हैं ? साथ ही वे यह भी नहीं जानते कि जन-सेवा या लोकोपकार किस चिड़िया का नाम है ? ऐसे लोग न तो 'साधु' कहे जा सकते हैं और न उसको जनता से दान लेकर खाने का तनिक भी अधिकार है। वे तो ठग या धोखेबाज ही कहे जा सकते हैं।

आदर्श 'साधु' (जनसेवक) के लक्षण—

समर्थ गुरु रामदास स्वयं साधु थे और उन्होंने हजारों साधु बनाए। वर्तमान समय में साधु-समुदाय की जो दशा हो रही है। यदि वे वैसे ही स्वार्थ परायण अथवा पेट की खातिर गेरुआ धारण करने वाले होते तो निस्संदेह उनको निंदा का ही पात्र समझा जाता और कोई उनका स्मरण न करता ? पर समर्थ गुरु का आदर्श इससे बिल्कुल भिन्न था। वे पेट भरने या दुनिया को ठगने के लिए

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

साधु नहीं हुए थे, वरन् उनका उद्देश्य परिवार-पालन के भार से मुक्त रहकर अपनी संपूर्ण शक्ति जन-सेवा और देशोद्धार में लगाना था। उन्होंने जो मठ और मंदिर स्थापित किए थे, उनके व्यवस्थापक साधुओं के भी ऐसे ही कर्तव्य निर्धारण किए थे। इस संबंध में 'महंत के लक्षण' शीर्षक अध्याय में उन्होंने लिखा है—

"महंत को हरिकथा निरूपण, उत्तम राजनीति और व्यवहार ज्ञान भी होना चाहिए। वह पूछना जानता हो, कहना या बतलाना जानता हो, अनेक प्रकार से व्याख्यान करना जानता हो और सबका समाधान करना जानता हो। उसे दूरदर्शिता के बल से वास्तविक बात पहले ही मालूम हो जाती हो, वह सावधानीपूर्वक प्रबल तर्क कर सकता हो और अच्छी तरह समझकर उचित बातें चुन सकता हो। जो इस प्रकार के सब कार्य कर सकता हो, वही बुद्धिमान् महंत है। जो एकांत में रहकर विचार करता हो, अच्छे-अच्छे ग्रंथों का अध्ययन करता हो, मन के गूढ़ अर्थ को समझता हो और पहले स्वयं कोई बात सीखकर दूसरों को सिखलाता हो, वही महंत की श्रेष्ठ पदवी पाता है और विवेक बल से सांसारिक कष्टों तथा झगड़ों में फँसे लोगों का उद्धार करता है। उसका लिखना-पढ़ना, बोलना-चालना सभी सुंदर होता है और भक्ति, ज्ञान, वैराग्य की सब बातें वह अच्छी तरह जानता है। उसे प्रयत्न करना बहुत अच्छा लगता है, वह अनेक संगों (कार्यक्रमों) में प्रवेश करता है और साहसपूर्वक आगे बढ़ता है।"

इस प्रकार किसी मठ की अध्यक्षता करने वाले साधु की उन्होंने जो कल्पना की है, वह वर्तमान समय के किसी समाज-सेवी नेता से मिलती-जुलती ही है। ऐसे व्यक्ति साधु के वेश में रहते हुए भी समाज के संचालक और मार्गदर्शक होते हैं, पर उनकी विशेषता यह थी कि इस प्रकार लोकहित के कार्यों में भाग लेने पर भी वे उसे निःस्वार्थ भाव से ही करते थे और स्वयं सब प्रकार के माया-मोह और बंधनों से बचे रहते थे। इसीलिए उन्होंने महंत को समाज-संचालन की आज्ञा देते हुए यह भी चेतावनी दी थी कि सांसारिक झगड़ों का समाधान करते हुए उनको स्वयं उनमें नहीं फँस जाना चाहिए—

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

"वह सब उपाधियों में मिलना भी जानता है और अपने आपको उनसे अलिप्त रखना भी जानता है। वह सब जगह रहता है, पर ढूँढ़ने पर कहीं नहीं मिलता और अंतरात्मा की तरह सब जगह रहने पर भी गुप्त रहता है। कोई प्राणी अंतरात्मा से रहित नहीं होता, तो भी यदि उसे देखना चाहें तो वह दिखाई नहीं पड़ती और अदृश्य होकर ही सब काम चलाती है। महंत भी अंतरात्मा की तरह ही होता है। सब लोगों को अच्छी-अच्छी बातें बतलाकर उन्हें चतुर बनाता है और स्थूल तथा सूक्ष्म सब प्रकार की विद्याओं की व्यवस्था करता है। वह स्वयं अपने बल से चतुर बनता है और सदा प्रयत्न करता है, पर उनमें लिप्त नहीं होता। ज्ञानी की 'महंती' इसी प्रकार की होती है, वह नीति और न्याय की रक्षा करना जानता है। न स्वयं अन्याय करता है और न दूसरों को करने देता है तथा विकट अवसर आ पड़ने पर भी उससे पार पाने का उपाय करना भी जानता है।'

आज भारत में पाए जाने वाले एक करोड़ 'साधु' तथा 'भिक्षु' नामधारियों की समस्या के कारण हम परेशान होते रहते हैं और उनको समाज का एक असह्य भार समझकर उनके निवारण की योजनाएँ बनाया करते हैं। पर यदि ये 'साधु' समर्थ गुरु के बतलाए आदर्श के अनुयायी होते, समाज से नाम मात्र के लिए निर्वाह के साधन लेकर उनके अनेक संगठनात्मक और रचनात्मक कार्यों की पूर्ति करते रहते तो कौन उनको बुरा कह सकता था अथवा उनसे पीछा छुड़ाने की बात सोच सकता था ? 'साधु' की पदवी निस्संदेह बहुत ऊँची है और उसका आशय संसार के उपकार के लिए आत्म-त्याग करना ही है। समर्थ गुरु रामदास ऐसे ही साधु थे और उस आपत्तिकाल में हिंदू-धर्म और समाज की दुर्दशा को देखकर उन्होंने ऐसे ही आत्म-बलिदानी 'स्वयं-सेवकों' का निर्माण और संगठन किया था। यही कारण था कि महाराज शिवाजी जैसे महान् शासक को उन्हें गुरु बनाना गौरवास्पद जान पड़ा और उन्होंने अपना राज्य तथा सर्वस्व उनके चरणों पर भेंट करके स्वयं एक कार्यवाहक की हैसियत से ही उसका संचालन किया।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

राजनीतिक शिक्षा की आवश्यकता—

समर्थ गुरु का मुख्य उद्देश्य अपने राष्ट्र को सशक्त और सुदृढ़ बनाना था, इसीलिए उन्होंने धर्म के साथ लोगों को राजनीति का उपदेश दिया। प्रायः यह देखने में आया था कि भारतीय शासक शक्तिशाली और सब तरह से रणकुशल होने पर भी विदेशियों की कूटनीति और छल-बल के कारण हार गए। मुसलमान आक्रमणकारियों ने सर्वप्रथम भारतीय नरेशों में फूट उत्पन्न करके उनके भीतर अपने भेदिया घुसाकर ही इस देश में अपना कदम जमाया था। अगर भारतवासी इस तरफ से सचेत रहते और शत्रु की चालों का आशय समझकर उसका मुकाबला सम्मिलित रूप से करते तो मुसलमान शासकों का सफल हो सकना कदापि संभव न था। इतना ही नहीं, अगर वे सम्मिलित रूप से प्रयास करते तो अफगानिस्तान और तुर्किस्तान जैसे छोटे-छोटे देशों का उसी समय खंड-खंड कर डालना उनके लिए कुछ भी कठिन न था।

इसी तथ्य को दृष्टिगोचर रखकर समर्थ गुरु ने अपने अनुयायियों को धर्म के साथ राजनीति का भी उपदेश दिया। उन्होंने कहा कि—"राजा को सब प्रकार की शंकाओं को मिटाते रहना चाहिए और लोगों के सामान्य अपराधों को क्षमा करते रहना चाहिए। दूसरे की मन की बात समझना चाहिए और न्याय तथा नीति में अंतर न पड़ने देना चाहिए। चतुरता से लोगों का मन अपनी ओर आकृष्ट करना चाहिए, हर एक को संतुष्ट रखना चाहिए और यथाशक्ति सभी सांसारिक कार्यों को सँभालना चाहिए। विशिष्ट कार्यों को पूरे करने का अवसर धैर्यपूर्वक देखते रहना चाहिए। किसी के साथ बहुत अधिक घनिष्ठता नहीं रखनी चाहिए। अपने कार्यों का विस्तार करते रहना चाहिए, पर उनके जाल में नहीं फँसना चाहिए। लघुता और मूर्खता से बचना चाहिए। दूसरे के दोषों पर पर्दा डालना चाहिए, क्योंकि सदैव किसी के अवगुणों को कहते रहना अच्छा काम नहीं। यदि दुष्ट व्यक्ति अपने वश में आ जाए और उसके सुधरने की आशा हो तो उसके साथ उपकार करके उसे छोड़ देना चाहिए।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

किसी कार्य करने में हठ नहीं करना चाहिए, वरन् जो कार्य न हो उसे दीर्घ प्रयत्न और युक्ति से पूरा करना चाहिए।''

"अपने दल में फूट न होने देनी चाहिए और किसी से अधिक विवाद न करना चाहिए। दूसरों के उद्देश्य को समझना चाहिए और यदि अपने विरुद्ध बहुत-से लोग हों तो घबड़ाना न चाहिए अथवा दूसरे स्थान में चला जाना चाहिए। दूसरों का दुःख समझना चाहिए, कम से कम उनका हाल पूछकर ही उनका दुःख बँटाना चाहिए। अपने समुदाय या समाज पर जो भलाई-बुराई आए, वह सब सहनी चाहिए। अध्ययनजन्य ज्ञान का अपार भंडार रहना चाहिए। मन में अच्छे-अच्छे विचार प्रस्तुत रहने चाहिए और परोपकार करने को सदा तत्पर रहना चाहिए। स्वयं शांति प्राप्त करनी चाहिए और दूसरों को शांति देनी चाहिए, स्वयं हठ छोड़ना चाहिए और दूसरों का हठ छुड़ाना चाहिए, स्वयं अच्छे काम करने चाहिए और दूसरों से कराने चाहिए। यदि किसी का कोई अहित करना पड़े तो पहले से कहना नहीं चाहिए और दूर से ही उसे उस अहित का अनुभव करा देना चाहिए। जो बहुत-से लोगों की बातें सहता है, उसे बहुत-से आदमी मिलते हैं, पर बहुत सहनशीलता दिखलाने से भी अपना महत्त्व नहीं रह जाता। राजनीतिक चालें अवश्य चलनी चाहिए, पर इस तरह कि किसी को इनका पता न चले। लोगों की अच्छी तरह परख रखनी चाहिए और राजनीतिक चालों से उनका अभिमान नष्ट कर देना चाहिए। कच्चे आदमी को अपने से दूर रखना चाहिए, बदमाशों से भी बात करनी चाहिए और अवसर पड़ने पर उनसे बचे भी रहना चाहिए। इस तरह की राजनीतिक चालें बहुत सी हैं, मन निश्चिंत रहने पर ही वे सूझती हैं।'

इस प्रकार समर्थ गुरु ने अपने अनुयायियों को उस राजनीति की शिक्षा दी, जो असत्य और बेईमानी पर नहीं वरन् विवेक, सूझ-बूझ और सावधानी पर आधारित होती है। उन्होंने कहा है कि—"जो डरकर वृक्ष पर चढ़ जाए, उसे दम-दिलासा देना चाहिए और जो लड़ने को तैयार हो, उसे धक्का देकर गिरा देना चाहिए।'

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

इसका आशय यह कि सांसारिक व्यवहार में भी हमको अकारण किसी का अहित नहीं करना चाहिए, यथासंभव समझौते तथा मेल-मिलाप की नीति से ही काम लेना चाहिए। लड़ना तभी चाहिए जब कोई नीच या स्वार्थी व्यक्ति दुष्टता करने पर उतारू हो। शिवाजी महाराज ने इसी नीति पर चलकर महाराष्ट्र में अद्‌भुत एकता एवं संगठन शक्ति उत्पन्न कर दी और औरंगजेब जैसे साम्राज्यवादी के छक्के छुड़ा दिए। स्वदेश और स्वधर्म के हिताकांक्षी व्यक्तियों के लिए यही नीति कल्याणकारी है। देश में अकारण अशांति या रक्तपात की स्थिति उत्पन्न करना श्रेष्ठ नीति नहीं है। महात्मा ईसा जैसे संत पुरुष भी यही कह गए हैं कि—"जो तलवार के आधार पर रहते हैं, उनका अंत भी तलवार से ही होता है।" इसलिए सच्ची राजनीति वही है, जिसमें दुष्टों के दमन के साथ शिष्टों के रक्षण और पालन का भी पूरा-पूरा ध्यान रखा जाए।

सामाजिक कर्तव्यों का पालन—

समाज में रहने वाले व्यक्तियों को अपना आचरण ऐसा रखना चाहिए कि जिससे अपनी उन्नति और भलाई के साथ समाज का भी हित हो। जो व्यक्ति केवल अपने हित का ध्यान रखते हैं और अपने लाभ के लिए दूसरों का अनहित करने में संकोच नहीं करते, उनको समाज का शत्रु ही समझना चाहिए। इसलिए समर्थ गुरु के उपदेशों का सार यही है कि—'स्वयं जियो और दूसरों को जीने दो।' उन्होंने अनेक अन्य संतों के समान यह नहीं कहा कि, स्वयं कष्ट सहन और सब तरह त्याग करते हुए दूसरे लोगों को ही सुख पहुँचाओ। इस तरह का उपदेश सुनने में भले ही बड़ा, ऊँचा और आदर्श जान पड़े, पर वह साधारण गृहस्थों के लिए उपयोगी नहीं हो सकता। इसलिए समर्थ गुरु ने वही उपदेश दिया है, जो वास्तव में व्यावहारिक हो सके। वे कहते थे—

"पहले स्वयं आवश्यकतानुसार भोजन कर लेना और तब बचा हुआ अन्न दूसरों को बाँटना चाहिए। इसी प्रकार मनुष्य को पहले स्वयं ज्ञान से तृप्त होना चाहिए और तब वह ज्ञान दूसरों को देना चाहिए। जो तैरना जानता हो, उसे दूसरों को डूबने न देना

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

चाहिए। पहले स्वयं उत्तम गुण ग्रहण करने चाहिए और तब वे गुण दूसरे लोगों को सिखलाने चाहिए। बिना स्वयं आचरण किए हुए जो बातें दूसरों को बतलाई जाती हैं, वे मिथ्या और व्यर्थ होती हैं। अपनी शक्ति को परोपकार में लगाना चाहिए, जिससे बहुत-से लोगों की भलाई हो सके। देखना चाहिए कि कौन दुःखी और पीड़ित है और यथाशक्ति उसकी सहायता करनी चाहिए। सबसे मधुर भाषण तो करना ही चाहिए। दूसरों के दुःख में दुःखी होना और उनके सुख में सुखी होना चाहिए और सब लोगों को प्रेमयुक्त बातें कहकर अपने साथ मिला लेना चाहिए।"

"दूसरों के मन का भाव समझकर उसके अनुसार काम करना चाहिए और लोगों को अनेक प्रकार से परखते रहना चाहिए। कम बोलना और तुरंत उत्तर देना चाहिए। कभी क्रोध न करना और सदैव क्षमा-भाव बनाए रखना चाहिए। यदि बराबर दूसरों के साथ अच्छा व्यवहार किया जाए तो वे लोग भी इसको अनुभव कर लेते हैं। जो सबसे विनीत भाव रखता है, उसे किसी बात की कमी नहीं रहती। चाहे अपना काम हो और चाहे पराया हो, सबको पूरी तरह करना चाहिए। अवसर पड़ने पर काम से चूकना या घबड़ाना ठीक नहीं। यह तो प्रत्यक्ष देखने में आता है कि अच्छी बात कहने से सब लोगों को सुख होता है। दूसरों को भी अपने ही समान समझना चाहिए। कठोर बातें सबको बुरी लगती हैं तो फिर ऐसी बुरी या कठोर बात क्यों कही जाएँ ?"

इसका तात्पर्य यही है कि जिस मनुष्य को समाज में रहना है, उसे अपना व्यवहार और आचरण ऐसा रखना चाहिए, जो सबको अच्छा लगे और वास्तव में लोकोपकारी हो। इसके लिए लोकमत को जानना और उसका आदर करना भी बहुत आवश्यक है। जो मनुष्य लोकमत की उपेक्षा करता है, वह प्रायः उद्दंड और स्वेच्छाचारी हो जाता है। ऐसा व्यक्ति कभी समाज के लिए हितकारी नहीं हो सकता, वरन् वह किसी न किसी तरह समाज की हानि करने वाला ही होता है। इसलिए समर्थ गुरु ने आदेश दिया है कि, मनुष्य को लोकमत के विरुद्ध न चलना चाहिए। वे यह भी नहीं कहते कि समाज में मूढ़तावश प्रचलित हो गई कुरीतियों या हानिकारक परंपराओं का

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

पालन किया जाए, पर उनको मिटाने के लिए भी इस प्रकार व्यवहार करना चाहिए, जिससे व्यर्थ का विरोध-भाव उत्पन्न न हो।

ऐसी अवस्था में लोगों को समझा-बुझाकर और अपना उदाहरण दिखाकर ही सुधारने का प्रयत्न करना चाहिए। इस समर्थ गुरु के उपदेशों का विवेचन करते हुए एक विद्वान् ने कहा है—

"श्री समर्थ ने आचार और विचार दोनों की ही शुद्धता पर बहुत जोर दिया है। मनुष्य को जन्म से मरण पर्यंत अपना आचार-विचार कैसा रखना चाहिए ? इसका वर्णन उन्होंने अपने मुख्य ग्रंथ 'दास बोध' में विस्तारपूर्वक किया है। ज्ञान की सबसे अधिक महिमा बतलाई गई है क्योंकि आचार-विचार की शुद्धि उसी के द्वारा होती है। इस ज्ञान की प्राप्ति का उपाय उन्होंने सत्संग, अध्ययन और सेवा बतलाया है। बात भी बहुत ठीक है। लोग अनेक प्रकार के ज्ञान प्राप्त करते हैं, पर समर्थ गुरु उन ज्ञानों को ज्ञान नहीं मानते, जब तक उनका आधार अध्यात्म न हो और यदि विचारपूर्वक देखा जाए तो वह ज्ञान है ही किस काम का, जिससे इहलोक और परलोक दोनों न सुधरें ?"

"प्रायः कहा जाता है कि आधुनिक पाश्चात्य जातियों ने ज्ञान का भंडार बहुत अधिक बढ़ाया है—उसकी अनेक प्रकार से वृद्धि की है, पर उस ज्ञान का उपयोग कैसे कामों में हो रहा है ? एक-दूसरे को काटने, मारने, लूटने और दबाने में ही न ! तो फिर ऐसे ज्ञान से मानव-जाति का उपकार हुआ या अपकार ? ऐसे ज्ञान के होने से तो न होना ही अच्छा है। फिर कुछ ज्ञान ऐसा भी होता है, जो अपने और दूसरों के उपकार के लिए उपयोगी हो सकता है। हम ऐसा ज्ञान साधारण शिक्षकों और पुस्तकों आदि से प्राप्त कर लेते हैं, पर फिर भी उसका ठीक-ठीक उपयोग करना नहीं जानते। इसीलिए श्री समर्थ ने कहा कि सच्चा और वास्तविक ज्ञान वही है, जो इहलोक और परलोक के साधन में पूर्ण सहायक हो सकें।"

हमारे धार्मिक आचार्य और संतपुरुषों ने भी ज्ञान और आचार-विचार की शुद्धता के विषय में बहुत कुछ लिखा है, पर उन्होंने उसको ऐसा अलौकिक और सीमित रूप दे दिया है कि वर्तमान काल

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

के मनुष्यों को वह व्यावहारिक नहीं जान पड़ता। आध्यात्मिक और दार्शनिक दृष्टि से यद्यपि उनकी बातें बहुत उच्च कोटि की हैं, पर जीवन-संघर्ष और लौकिक प्रगति की दृष्टि से उनको सर्व साधारण के लिए पालन कर सकने योग्य नहीं माना जाता। समर्थ गुरु रामदास के उपदेशों की यह विशेषता है कि उन्होंने आज से तीन-सौ वर्ष पहले व्यक्ति, समाज और राज्य के कर्तव्यों का विवेचन किया, वह वर्तमान समय में भी उपयोगी जान पड़ता है। उनके धर्मग्रंथ 'दासबोध' की अधिकांश शिक्षाएँ जैसी औरंगजेब के शासन काल में लाभदायक थीं वैसी ही इस 'एटम के युग' में भी सुख और शांति को प्राप्त करने में सहायक हो सकती हैं।

श्री समर्थ की इस विशेषता का मुख्य कारण यह है कि उन्होंने जो कुछ कहा है, वह केवल प्राचीन ग्रंथों को पढ़कर या उस समय के धार्मिक साधु-महात्माओं की बातें सुनकर नहीं लिखा गया है, वरन् वर्षों तक देश में भ्रमण करके तथा समाज और राज्य की स्थिति का गंभीर अनुभव प्राप्त करके लिखा गया है। यही कारण है कि अन्य धर्माचार्य और महात्मा जहाँ लोगों को यह उपदेश देते थे कि मनुष्य को भगवान् के निमित्त तन-मन-धन सबका त्याग कर देना चाहिए और सांसारिक कष्टों को 'भगवान् की कृपा' समझकर सहर्ष ग्रहण करना चाहिए, वहाँ समर्थ गुरु ने कहा कि "मनुष्य को पहले अपना उदर पोषण अच्छी तरह से करके शेष सामग्री को समाज के लिए परोपकारार्थ व्यय करना चाहिए।"

यदि विचार किया जाए तो यही व्यावहारिक मार्ग माना जा सकता है। यदि हम स्वयं भूखे रहकर दूसरों का पेट भरते रहेंगे तो हमारा वह 'परोपकार' कितने दिन चल सकेगा ? प्रत्यक्ष है कि उस दशा में हम दिन पर दिन निर्बल और कार्य-शक्ति से हीन होते चले जायेंगे और थोड़े ही दिनों में ऐसी स्थिति आ जायेगी कि हम न तो अपना निर्वाह कर सकेंगे और न दूसरों का उपकार। इसलिए सामान्य अवस्था में वह उपदेश अव्यावहारिक और काल्पनिक ही रहता है। विशेष परिस्थिति में जैसी भामाशाह आदि के सामने उपस्थित हुई थी, उसे एक महान् आदर्श अवश्य मानना चाहिए

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

और राष्ट्र-रक्षा या समग्र समाज की किसी कठिन समस्या के अवसर पर उसके अनुसार आचरण भी करना चाहिए, पर नित्यप्रति के जीवन में उसके नाम पर स्वयं अभावग्रस्त जीवन व्यतीत करना बुद्धिमानी की बात नहीं कही जा सकती। इसीलिए समर्थ गुरु रामदास ने सदैव यही उपदेश दिया है कि, मनुष्यों को वही मार्ग ग्रहण करना चाहिए, जो इहलोक और परलोक दोनों में सहायक हो, जिससे व्यक्ति और समाज दोनों सुखी हो सकें।

इतना ही नहीं 'इहलोक' और 'परलोक' का अर्थ बाह्य और अंतरंग सुख-शांति से भी है। वर्तमान समय में जो लोग परलोक का अर्थ स्वर्ग-नर्क समझकर उस पर अविश्वास करने लगते हैं, उनको समझना चाहिए कि लौकिक का अर्थ बाहरी सुख-साधन और पारलौकिक का अर्थ आंतरिक या आत्मिक सुख-शांति भी है। मनुष्य को उद्योग और परिश्रम द्वारा बाह्य जीवन में सुख, आराम के साधन प्राप्त करने चाहिए और परोपकार तथा सेवा-धर्म द्वारा आंतरिक जीवन को उच्च बनाना—आत्मिक शांति प्राप्त करना चाहिए। इन दोनों का उचित समन्वय करने से ही व्यक्ति और समाज की, समग्र राष्ट्र की उन्नति हो सकती है। यही समर्थ गुरु के उपदेश का रहस्य है।

त्याग वृत्ति और सेवा भावना—

श्री समर्थ गुरु के विषय में जो महत्त्वपूर्ण घटनाएँ प्रसिद्ध हैं, उनमें से एक यह है कि शिवाजी को शिष्यत्व की दीक्षा देने के उपरांत एक दिन वे स्नान, संध्या-वंदन करके नियमित रूप से भिक्षा माँगते हुए सतारा में राज महलों पर पहुँच गए और वहाँ भी अन्य स्थानों में भिक्षा माँगने के समान 'जय जय रघुवीर समर्थ' की ध्वनि की। गुरु की बोली को पहिचानकर शिवाजी महाराज आनंद मग्न हो गए और विचार करने लगे कि ऐसे महान् 'भिखारी' की झोली में क्या भिक्षा डाली जाए ?' उन्होंने क़ागज पर अपने समस्त राज्य का दान-पत्र लिखकर झोली में डाल दिया। जब समर्थ गुरु ने उसे पढ़ा तो हँसकर कहने लगे कि—"शिवा ! तुमने समस्त राज्य तो हमको दे डाला, अब तुम क्या करोगे ?" शिवाजी ने हाथ जोड़कर

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

कहा—"महाराज ! मैं आपकी चरण सेवा करूँगा।" समर्थ गुरु इस भक्ति-भाव को देखकर बहुत संतुष्ट हुए और बोले—"हम वैरागी राज्य को लेकर क्या करेंगे ? अब हमारी अमानत समझकर राज्य का कारोबार तुम्ही चलाओ।" शिवाजी ने गुरु की आज्ञा को शिरोधार्य किया और उसी दिन से राज्य का झंडा भगवा रंग का कर दिया। तब से वे अपने को राज्य का एक सेवक समझकर ही निष्ठापूर्वक सब कार्य करते रहे। इस प्रकार श्री समर्थ ने एक ही समय में त्याग और कर्तव्य-भावना का परिचय देते हुए एक अनुपम परंपरा का सूत्रपात कर दिया, जिसके परिणामस्वरूप शासन कार्य में धर्म और न्याय का विशेष रूप से समावेश हो गया।

राजा भगवान् का नौकर होता है—

समर्थ गुरु के विषय में दो-एक चमत्कार जैसी घटनाएँ प्रसिद्ध हैं, वे चाहे पूर्ण सत्य न भी हों तो भी बहुत शिक्षाजनक हैं। शिवाजी महाराज जब सामानगढ़ का किला बनवा रहे थे तो एक दिन वहाँ के निर्माण कार्य का निरीक्षण करते हुए उनके मन में यह भावना उत्पन्न हुई कि मेरे द्वारा इन सैकड़ों मजदूरों और कारीगरों का निर्वाह हो रहा है। संयोगवश उसी समय समर्थ गुरु वहाँ आ गए, वे अपने अनुभव द्वारा शिवाजी के मनोभाव को समझ गए। अपने शिष्य में इस प्रकार के अहंकार की उत्पत्ति को हानिकारक समझकर वे कहने लगे—"शिवा ? तूने तो यह बड़ा भारी काम कर रखा है, जिससे न जाने कितने गरीबों का उदर-पालन होता है।" शिवाजी ने उनके आंतरिक आशय को न समझा और कह दिया—"महाराज ! यह सब आपकी ही कृपा का फल है।"

इस प्रकार बातचीत करते हुए समर्थ गुरु की निगाह पास में पड़े हुए एक बड़े पत्थर की तरफ गई। उन्होंने शिवाजी से कहा कि "एक बेलदार बुलाकर इस पत्थर को तुड़वाओ जब पत्थर के ऊपर भारी हथौड़े की कई चोटें लगीं तो उसके दो टुकड़े हो गए। सब लोगों ने देखा कि भीतर से उसका कुछ भाग पोला था, जिसमें थोड़ा-सा पानी भरा था और उसमें एक छोटा-सा जीवित मेंढ़क भी था। यह देखकर सब कोई आश्चर्य करने लगे, पर समर्थ गुरु ने

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

कहा—"शिवा ! तुम्हारा प्रभाव तो बहुत बढ़ा-चढ़ा है, जो इस पत्थर के भीतर भी एक जीव का पालन कर रहे हो।" शिवाजी ने उत्तर दिया—"इसमें मेरा क्या है ?" समर्थ गुरु ने किंचित व्यंग के साथ कहा—"क्यों नहीं ? जिस प्रकार तुम इतने मजदूरों का पालन कर रहे हो, उसी प्रकार इस मेंढक के पालनकर्ता भी तुम्हीं हो।"

शिवाजी अपने अहंकार की भूल को समझ गए और अत्यंत विनीत भाव से कहने लगे—"महाराज ! मेरे अपराध को क्षमा करें, मुझ तुच्छ से कुछ नहीं हो सकता।" समर्थ गुरु ने कहा—"क्षमा तो पहले हो चुका, पर तुमको सदा यह याद रखना चाहिए कि तुम उस बड़े सरकार (राम) के बड़े नौकर हो। तुम्हारे हाथ से वही दूसरों को दिलाता है। इसके लिए किसी प्रकार का अभिमान करना उचित नहीं।" शिवाजी पर इस घटना का बड़ा प्रभाव पड़ा और फिर उनमें कभी ऐसी अहंकार-भावना नहीं आई।

श्री समर्थ गुरु की क्षमा वृत्ति—

एक दिन समर्थ निजानंद स्वामी के उत्सव में कहाड़ गए थे। वहाँ का कार्य समाप्त होने पर जब वे २०-२५ शिष्यों के साथ सज्जनगढ़ के किले की तरफ वापस जा रहे थे तो रास्ते में सबको भूख लगी। वहाँ भोजन की कोई व्यवस्था न होने से उन्होंने एक खेत से कुछ भुट्टे तोड़कर खाने की आज्ञा दे दी। जब शिष्य उन भुट्टों को भूनकर खा रहे थे उसी समय खेत का मालिक, जो एक साधारण जमींदार था, वहाँ आ पहुँचा। उसकी इस तरह अपने खेत से भुट्टे तोड़े जाने पर क्रोध आ गया और समर्थ गुरु को सबका मुखिया समझकर एक ज्वार के डंठल से पीटने लगा। इस पर सब शिष्यों ने उसे पकड़ लिया और मारने लगे, पर समर्थ गुरु ने शिष्यों को रोका और खेत वाले को छुड़वा दिया। दूसरे दिन जब शिवाजी महाराज गुरु को स्नान कराने लगे तो उन्होंने उनकी पीठ पर मार पड़ने के निशान देखे। पूछने पर समर्थ गुरु ने कुछ भी नहीं कहा। पर जब समर्थ गुरु विश्राम करने चले गए तो शिवाजी ने एक शिष्य से बहुत आग्रह करके उस घटना का हाल मालूम कर लिया। उसने उसी समय उस जमींदार को पकड़कर लाने की आज्ञा दे दी।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

जब यह खेत वाला गिरफ्तार होकर दरबार में आया और उसने समर्थ गुरु को ऊँचे सिंहासन पर बैठे देखा तो उसे अपनी भूल मालूम हो गई। वह समझ गया कि उसने जिसे साधारण वैरागी समझकर पीट दिया था, वे महाराज शिवाजी के गुरु थे। वह भय से काँपने लगा और समर्थ गुरु के चरणों पर गिर पड़ा। शिवाजी उसे बहुत कड़ा दंड देने जा रहे थे, पर समर्थ गुरु ने उनको रोक दिया। उन्होंने उसका अपराध तुरंत क्षमा ही नहीं कर दिया वरन् शिवाजी से कहकर उस खेत को सदा के लिए उसको दिला दिया। इस प्रकार बुराई के बदले में भलाई किए जाते देखकर समस्त दर्शकों पर बड़ा प्रभाव पड़ा और उन्होंने जान लिया कि राजनीति में भाग लेने पर भी अध्यात्म की दृष्टि से समर्थ गुरु सच्चे संत हैं।

दान लेने में अरुचि—

समर्थ गुरु के बड़े भाई श्री श्रेष्ठ भी अपनी जन्मभूमि जांब-ग्राम में रहकर भक्ति-मार्ग का प्रचार करते रहते थे। जब उनको अपना शरीर शिथिल होता जान पड़ा तो उन्होंने पत्र लिखकर समर्थ को बुलाया। समर्थ वहाँ गए और एक महीने तक अपने भाई के साथ धर्म-चर्चा करके लौट आए। इसके कुछ ही समय पश्चात् श्रेष्ठ का स्वर्गवास हो गया और उनके दोनों पुत्रों को समर्थ ने अपने पास बुला लिया। जब यह समाचार महाराज शिवाजी ने सुना तो वे समर्थ के आश्रम में आए और उन्होंने इच्छा प्रकट की कि 'जांब' तथा अन्य कुछ गाँव मिलाकर श्रेष्ठ के पुत्रों के नाम कर दिए जाएँ, जिससे वे पारिवारिक राम-मंदिर की व्यवस्था करते रहें और अपना खर्च भी चलाते रहें। समर्थ गुरु ने कहा—कि अभी कोई जरूरत नहीं है, फिर देखा जायेगा। इससे शिवाजी महाराज दुःखी होकर कहने लगे—"मालूम होता है कि भगवान् राम की सेवा करना मेरे भाग्य में नहीं है।" तब समर्थ गुरु ने आज्ञा दी कि, "अच्छा, इतना प्रबंध कर दो कि जिससे राम मंदिर की व्यवस्था और वहाँ आने वाले साधु-संतों का सत्कार होता रहे।" तत्पश्चात् राज्य की ओर से तेंतीस गाँव मंदिर के नाम लगा दिए गए, जिससे कितने ही धर्मोत्सव सदैव मनाए जाते रहे।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

राष्ट्र-धर्म का प्रचार—

समर्थ गुरु रामदास की सबसे अधिक महत्ता इसी कारण मानी जाती है कि जहाँ अन्य संत-महात्माओं ने अधिकतर धर्म, उपासना, भजन अथवा नीति और चरित्र का उपदेश दिया, वहाँ इन्होंने जनता को देश, जाति, समाज की रक्षा के लिए विशेष रूप से प्रेरणा दी। वैसे तो उन्होंने उत्तर भारत और मध्य-प्रदेश के अनेक स्थानों में मठों की स्थापना की, जो अभी तक 'रामदासी मठ' के नाम से प्रसिद्ध हैं। पर महाराष्ट्र के गाँव-गाँव में उन्होंने ऐसा जाग्रति का मंत्र फूँका और संगठन कार्य किया कि उस प्रदेश की काया पलट ही हो गई। उस विदेशी पराधीनता के युग में जबकि अधिकांश भारतीय जनता भयभीत और निराश बनी हुई जैसे-तैसे समय काट रही थी। महाराष्ट्र में श्री समर्थ गुरु ने राष्ट्रीयता की ज्वाला प्रज्ज्वलित कर दी। यही कारण है कि जहाँ राजस्थान के वीर-क्षत्रिय एक-एक करके मुसलमान शासकों से दबते चले गए और बहुत-से तो उनके सहायक और अनुयायी बन गए, वहाँ महाराष्ट्र में महाराजा शिवाजी ने हिंदुत्व का झंडा गाढ़ दिया और विदेशी शासक को ऐसा जोरदार धक्का लगाया जिससे उसकी जड़ हिल गई।

यह सब प्रभाव श्री समर्थ गुरु के उपदेशों और प्रचार-कार्य का ही था, जिसने वहाँ की समस्त जनता को उद्यत और संघबद्ध करके, शिवाजी महाराज की सहायतार्थ खड़ा कर दिया। राजस्थान के शासक के क्षत्रिय सैनिक वीर शस्त्र-संचालन में निपुण अवश्य थे, पर वहाँ की जनता सर्वथा उदासीन और निष्क्रिय थी। यही कारण था कि सर्वथा नए और अल्प साधन युक्त होने पर भी महाराज शिवाजी औरंगजेब जैसे प्रसिद्ध सम्राट् के मुकाबले में टिके रहे और इतनी सफलता प्राप्त कर सके, जिसके परिणामस्वरूप अंत में मुगलों के शासन की जड़ ही उखड़ गई। समर्थ गुरु केवल मुसलमानों के शासन को ही अनुचित नहीं मानते थे, वरन् अंग्रेज, डच, पोर्तगीज़ आदि की वृद्धि को भी हानिकारक मानते थे। वे भली प्रकार समझते थे कि देश का कल्याण किसी विदेशी के शासन में नहीं हो सकता, उसके लिए स्वराज्य और स्वधर्म का होना अनिवार्य है। उनके हृदय

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

में यही भावना सदैव बनी रहती थी। एक बार जब वे अपने बड़े भाई द्वारा मानी गई मनौती की पूर्ति के लिए 'पारघाट' में देवी की पूजा करने गए तो वहाँ भी उन्होंने देवी के सम्मुख यही प्रार्थना की—

तूझा तूँ बाढ़वी राजा, शीघ्र आम्हाँचि देखतां।
दुष्ट संहारिले भागें, ऐसे उदंड एकतो।।
परंतु रोकड़ें कोही। मूल सामर्थें दाखवी।।

अर्थात्—"हे माता ! इस राजा (शिवाजी महाराज) का उत्कर्ष तू हमारे सामने ही कर दे। मैंने सुना है कि तूने प्राचीन समय में अनेक दुष्टों का दमन किया है। लेकिन अपनी इस सामर्थ्य का कुछ प्रभाव मुझे इस समय तो दिखला।"

आनंदवन भुवन का स्वप्न—

देशोद्धार की भावना श्री समर्थ गुरु के मन में इतनी अधिक थी कि एक दिन स्वप्न में भी उन्होंने इसी इच्छा की पूर्ति का दर्शन किया। इसका वर्णन करते हुए उन्होंने लिखा है कि—"वे आनंदवन भुवन' (काशी) को चल दिए हैं। वहाँ देवगण स्वधर्म के दोषों को नष्ट करते हैं। म्लेच्छ रूपी दैत्यों को डुबा देने के लिए वहाँ बड़ी धूमधाम हो रही है। हिंदुस्तान प्रबल हो गया है और उसने पापियों को नष्ट कर डाला। उनके विरुद्ध प्रत्यक्ष प्रभु रामचंद्र ने शस्त्र हाथ में लिया है। अब पापमूर्ति औरंगजेब नष्ट हो गया है, म्लेच्छों का संहार हो गया है और उसके तोड़े-फोड़े हुए 'क्षेत्र' फिर से बसा दिए गए हैं। अब स्नान-संध्या के लिए खूब पानी है और 'आनंदवन भुवन' में जप-तप और अनुष्ठान होने लगे हैं। रामवरदायिनी माता भवानी भी नष्ट चांडालों को खाने के लिए राजा के साथ चल पड़ी। पूर्व काल में माता ने भक्तों का रक्षण किया था। अब भी वह भक्तों का संरक्षण करती है।" इस प्रकार श्री समर्थ ने अपने समकालीन सभी श्रेणियों के व्यक्तियों को देश और धर्म की रक्षा के लिए प्रेरणा दी और वह महाराष्ट्र शासन के रूप में सफल भी हुई।

अध्यात्मवाद का समर्थन—

भारतीय समाज की दुर्बलता का एक मुख्य कारण वहाँ का बहुदेववाद का सिद्धांत भी रहा है। यद्यपि प्राचीन मनीषियों ने 'एकोऽहं

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

बहुस्यामि' कहकर इसका समाधान कर दिया, पर सर्वसाधारण इस तत्त्व को समझने में असमर्थ ही रहे। परिणाम यह हुआ कि भारतीय समाज विविध संप्रदायों में बँट गया और उसमें विभिन्नता और निर्बलता आ गई। शैव और वैष्णवों में तो न जाने कितने पुराने समय से संघर्ष होता आया है और उसके परिणामस्वरूप भारतीय-राष्ट्र की शक्ति क्षीण हुई है। श्री समर्थ ने इस तथ्य को समझा और इस राष्ट्र-संगठन में बाधा स्वरूप माना। यद्यपि उन्होंने प्रधान रूप में रामोपासना का प्रचार किया और हनुमान जी के सैकड़ों छोटे-बड़े मंदिर स्थापित कराए, पर उन्होंने यह भी कह दिया कि—वह 'राम' परमात्मा के रूप में एक है और हम देश-काल के प्रभाव से जिन अनेक देवी-देवताओं की पूजा-उपासना करते हैं, वे सब उसी आत्म-तत्त्व के रूपांतर हैं। इस बात को उन्होंने 'दास-बोध' के 'विविध देवता' अध्याय में बड़े अच्छे और मनोरंजक ढंग से प्रकट किया है—

"हे गजवदन ! मैं तुम्हें नमस्कार करता हूँ। तुम्हारी महिमा का पता नहीं चलता। छोटे-बड़े सभी को तुम्हीं विद्या और बुद्धि देते हो। हे सरस्वती ! तुम्हें नमस्कार करता हूँ। तुम्हीं से चारों वाचाओं का स्फुरण होता है। तुम्हारा वास्तविक स्वरूप जानने वाले लोग बहुत थोड़े हैं। चतुरानन ! तुम धन्य हो। तुम्हीं ने सृष्टि की रचना की तथा शास्त्र प्रकट किए। हे विष्णु ! तुम धन्य हो। तुम्हीं पालन करते हो और एक ही अंश से सब जीवों को दिन पर दिन बढ़ाते रहते हो और उनसे सब काम कराते हो। हे भोले शंकर ! तुम धन्य हो। तुम्हारी देन का अंत नहीं है और तुम निरंतर राम का नाम जपते रहते हो। हे इंद्रदेव ! तुम धन्य हो। तुम सब देवताओं के भी देवता या उनमें मुख्य हो। भला इंद्रलोक के वैभव को मैं कैसे बतला सकता हूँ ? हे धर्मराज ! तुम धन्य हो। तुम धर्म-अधर्म सब जानते हो। तुम प्राणी मात्र के मन की बात जान लेते हो। हे व्यंकटेश ! तुम्हारी महिमा बहुत अधिक है। अच्छे लोग तुम्हारे यहाँ खड़े होकर अन्न खाते हैं। हे वनशंकरी ! तुम भी धन्य हो तुम अनेक प्रकार के शाक खाती हो। तुम्हारे सिवा ऐसा कौन है, जो इस प्रकार चुन-चुनकर भोजन करता हो। हे परम बलवान् हनुमान् ! तुम धन्य हो। तुम उड़द के बड़ों की बहुत बड़ी माला पहिनते हो। हे तुलसी भवानी ! तुम धन्य हो। तुम

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

भक्तों पर सदा प्रसन्न रहती हो। हे पांडुरंग ! तुम धन्य हो। तुम्हारे यहाँ सदा कथा की धूम मची रहती है। हे क्षेत्रपाल ! तुम धन्य हो। तुमने बहुत-से लोगों को भक्ति-मार्ग में लगाया है। राम, कृष्ण आदि अवतारों की महिमा तो अपार ही है। उन्हीं के कारण बहुत-से लोग उपासना में तत्पर हुए हैं।"

"पर इन सब देवताओं का मूल यह अंतरात्मा है। भू-मंडल के सब लोग इसी को प्राप्त होते हैं। यही अनेक प्रकार के देवताओं का रूप धारण करके बैठा है, यही अनेक शक्तियों के रूप में प्रकट हुआ है और यही सब वैभवों का भोग करने वाला है। विचार करने से जान पड़ता है कि इसका विस्तार बहुत अधिक है। यही अनेक देवताओं और मनुष्यों का रूप धारण करके बराबर आता-जाता रहता है। कीर्ति और अपकीर्ति, बहुत अधिक निंदा और बहुत अधिक स्तुति सबका भोग यही करता है। अंतर्निष्ठ ज्ञानी ही इस पर पूरा-पूरा विचार करते हैं और अंतःभ्रष्ट इसी में डूब जाते हैं, क्योंकि वे बाहरी लोकाचार में ही डूबे रहते हैं।"

'दासबोध' वास्तव में समयानुकूल शिक्षाओं का भांडागार है। यद्यपि वर्तमान समय में अधिकांश महाराष्ट्रीय ब्राह्मण गीता, रामायण या विष्णु सहस्र नाम इत्यादि की तरह प्रतिदिन उसके भी कुछ पृष्ठों का पाठ कर लेते हैं, पर समर्थ गुरु का उद्देश्य वास्तव में यह नहीं था। वे राष्ट्र के एक सच्चे संगठनकर्ता थे, इसलिए धर्म-चर्चा, पूजा, उपासना आदि के माध्यम से इन्होंने लोगों की अंधविश्वास की भावना को दूर करके कर्तव्यपरायण बनने की शिक्षा दी है। धर्म की शक्ति संसार में सबसे अधिक प्रबल है, हमारे शास्त्रों में तो स्पष्टतः कहा गया है—"जो धर्म की रक्षा करता है, उसकी रक्षा धर्म अवश्य करेगा।" इसका आशय यही है कि—पूजा, उपासना, देवार्चन, जप, पाठ आदि उसी का नाम है, जो आडंबर और अंधश्रद्धा को त्यागकर धर्म तत्त्व को समझकर उसका पालन करता है। श्री समर्थ 'दासबोध' में कहते हैं—

"साधु का मूल लक्षण यह है कि— सदा अपने वास्तविक स्वरूप को समझता रहे। संसार में रहते हुए भी उसमें लिप्त न हो।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

वह जब अपने स्वरूप को समझ लेता है तो उसे संसार की चिंता जरा भी नहीं होती।"

यद्यपि सभी संत पुरुषों ने आत्मा को पहिचानने तथा भौतिक पदार्थों को क्षणभंगुर मानने की शिक्षा दी है, पर सांसारिक व्यवहार में इस भावना का उपयोग करने की तरफ थोड़े ही लोगों ने ध्यान दिया है। इस दृष्टि से श्री समर्थ एकमात्र ऐसे धर्म-नेता थे, जिन्होंने धार्मिक प्रचार से खुले तौर पर राष्ट्रीय संगठन को सुदृढ़ बनाने का काम लिया और उसके द्वारा मुगल बादशाहत जैसी विशाल सत्ता पर करारा प्रहार करके उसे जर्जर बना दिया।

इस प्रकार श्री समर्थ ने भारतीय समाज को चैतन्य होकर अपना न्यायानुकूल अधिकार प्राप्त करने के लिए अनेक प्रकार से प्रेरित किया। वे यद्यपि निरंतर जप-तप करते रहते थे, पर वे केवल भजनानंदी अथवा धर्म-शास्त्रों का प्रवचन करने वाले नहीं थे। वे जनता के सच्चे शिक्षक थे और अध्यात्म तथा व्यवहार का समन्वय करके ऐसा मार्गदर्शन करते थे, जिससे सांसारिक बाधाओं का निराकरण होकर लौकिक और पारलौकिक दृष्टि से मानव जीवन सफल हो सके। उन्होंने अपनी इस कार्य-पद्धति से महाराष्ट्र में ऐसी जाग्रति उत्पन्न कर दी कि वहाँ विदेशी शासन का सर्वथा अंत हो गया और आगे चलकर समग्र देश पर उसका बहुत अधिक प्रभाव पड़ा।

श्री समर्थ वर्णाश्रम-धर्म के अनुयायी थे, इसलिए उन्होंने समाज में ब्राह्मणों की प्रधानता का समर्थन किया और उन्हीं को मुख्य रूप से अपना शिष्य बनाकर संगठन कार्य को आगे बढ़ाया। कुछ लेखकों ने उन पर ब्राह्मण-पक्षपाती होने का दोषारोपण किया है, पर कुछ भी हो, उन्हीं के उपदेशों से महाराष्ट्र में स्वजातीय शासन कायम हो सका, जिसने भारत में मुसलमानी शासन के अंत करने में बहुत बड़ा काम किया। वह तो उसी अवसर पर अंग्रेजों के बीच में कूद पड़ने के कारण परिस्थितियाँ फिर बदल गईं, अन्यथा श्री समर्थ की अद्‌भुत कार्यशीलता और उपदेशों के प्रभाव से एक स्वाधीन भारतीय राष्ट्र का उद्‌भव सर्वथा संभव था। आज भी उनके उपदेशों से हम जातीयता की रक्षा और धर्म के व्यावहारिक रूप को समझने में समर्थ हो सकते हैं।

मुद्रक : युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org